शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page – 81–83

'आपका बंटी' उपन्यास में स्त्रीत्व और मातृत्व का अंतर्द्वंद्व एवं संघर्ष

डॉ.पी.एम.आर. जयंती
हिंदी- व्याख्याता
एस.के.आर. एंड एस.के.आर. महिला शासकीय डिग्री महाविद्यालय (स्वायत्त)

Received– 27June - 2026
Accepted-29 June- 2026
Published– 30 June 2026
Corresponding Author-
डॉ.पी.एम.आर. जयंती
हिंदी- व्याख्याता
एस.के.आर.एंड एस.के.आर. महिला शासकीय डिग्री महाविद्यालय (स्वायत्त)

DOI-https://doi.org/10.67275/SU.2026.041422

Funding Policy-
'Shodh Utkarsh' is an independent journal and receives no financial support or grant from any public, commercial, or not-for-profit organization.
वित्त पोषण नीति-
'शोध उत्कर्ष' एक स्वतंत्र पत्रिका है। इसे किसी भी सार्वजनिक, वाणिज्यिक या गैर-लाभकारी संगठन से कोई वित्तीय सहायता, अनुदान या फंडिंग प्राप्त नहीं होती है।
Copyright Notice -
© 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC-BY 4.0).
कॉपीराइट सूचना-
© २०२६ लेखक। यह कार्य क्रिएटिव कॉमन्स अ Attribution 4.0 इंटरनेशनल लाइसेंस (CC-BY 4.0) के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त है।

OPEN ACCESS
Shodh Utkarsh
CC-BY 4.0

सारांश:- मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'आपका बंटी' (१९७१) हिंदी उपन्यास विधा का एक ऐसा मील का पत्थर है, जिसने समकालीन मध्यवर्गीय भारतीय समाज में पारिवारिक संस्था के विघटन और उससे उत्पन्न बाल-मनोविज्ञान के बिखराव को एक नई दिशा दी। परंतु, यह उपन्यास केवल बाल-मनोविज्ञान या दांपत्य-विघटन की कहानी मात्र नहीं है, बल्कि इसके केंद्र में आधुनिक नारी के अस्तित्वगत संकट का एक अत्यंत जटिल आयाम निहित है—'स्त्रीत्व' और 'मातृत्व' का पारस्परिक और अपरिहार्य संघर्ष। प्रस्तुत शोध पत्र शकुन के चरित्र के माध्यम से इस बात का विश्लेषण करता है कि किस प्रकार एक आधुनिक, आर्थिक रूप से स्वतंत्र और आत्मनिर्भर स्त्री जब अपने वैयक्तिक अस्तित्व (स्त्रीत्व) की रक्षा के लिए कदम उठाती है, तो उसका पारंपरिक मातृत्व किस प्रकार संकट में पड़ जाता है। पितृसत्तात्मक संरचना में 'माँ' को एक ऐसी अलौकिक, त्यागमयी और अमूर्त देवी के रूप में स्थापित किया जाता है जो अपनी वैयक्तिक इच्छाओं से रहित हो। जब शकुन अपनी शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु पुनर्विवाह का मार्ग चुनती है, तो वह न केवल सामाजिक रोष का शिकार होती है, बल्कि उसका मातृत्व बंटी की मानसिक दुनिया को छिन्न-भिन्न कर देता है। यह शोध पत्र नारीवादी सिद्धांतांकन, सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनाओं और पाठ्य-साक्ष्यों के आधार पर इस अनवरत द्वंद्व की मीमांसा करता है।
बीज शब्द:-आपका बंटी,मन्नू भंडारी,स्त्रीत्व,मातृत्व,पितृसत्तात्मक द्वंद्व,बाल-मनोविज्ञान,अस्तित्ववाद,आर्थिक स्वतंत्रता,पुनर्विवाह की त्रासदी,शकुन।

प्रस्तावना -साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि उसके भीतर छिपे अदृश्य अंतर्द्वंद्वों को उद्घाटित करने वाली एक्सरे मशीन भी है। हिंदी उपन्यास के इतिहास में साठोत्तरी काल (१९६० के बाद का समय) सामाजिक मूल्यों के संक्रमण और बदलाव का काल रहा है। औद्योगिक विकास, महानगरीय बोध, शिक्षा के प्रसार और नारी-चेतना के उदय ने पुरुष-स्त्री संबंधों के पारंपरिक ढांचे को हिलाकर रख दिया। इस युगीन परिवर्तन को मन्नू भंडारी ने अपने उपन्यासों में अत्यंत सूक्ष्मता से उकेरा है। 'आपका बंटी' मूल रूप से इस वैचारिक बदलाव की कोख से उपजा उपन्यास है। शकुन इस संक्रमण की प्रतिनिधि पात्र है। वह मध्यकालीन 'मूक' या 'पति-परायणा' नारी नहीं है। वह कॉलेज की प्रिंसिपल है, आत्मनिर्भर है, और स्वयं के आत्मसम्मान के प्रति अत्यंत सजग है। जब उसका पति अजय उसके स्वाभिमान को कुचलने का प्रयास करता है, तो वह विद्रोह करती है और संबंध-विच्छेद (तलाक) कर लेती है। यहीं से उस त्रासदी का जन्म होता है जो मातृत्व और स्त्रीत्व को दो परस्पर विरोधी छोरों पर लाकर खड़ा कर देती है।

पारंपरिक रूप से भारतीय संस्कृति में मातृत्व को स्त्रीत्व का चरमोत्कर्ष माना गया है; यहाँ तक कि बिना मातृत्व के स्त्रीत्व को अपूर्ण घोषित किया गया है। लेकिन मन्नू भंडारी इस उपन्यास में यह यक्ष प्रश्न उठाती हैं कि "क्या माँ बनने के बाद एक स्त्री का व्यक्तिगत अस्तित्व पूरी तरह समाप्त हो जाना चाहिए?" क्या माँ केवल 'माँ' है, उसका कोई स्वतंत्र मानसिक, शारीरिक या भावनात्मक वजूद (स्त्रीत्व) नहीं है? शकुन के जीवन का विवर्तन इसी जटिल प्रश्न का व्यावहारिक और दारुण उत्तर प्रस्तुत करता है।

मातृत्व की पारंपरिक अवधारणा और पितृसत्तात्मक दबाव-

स्त्रीत्व और मातृत्व के संघर्ष को समझने के लिए सबसे पहले हमें उस सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश को समझना होगा, जहाँ 'माँ' शब्द को एक अलौकिक आभामंडल से ढँक दिया जाता है। पुरुषवादी समाज ने स्त्री को वश में रखने और उसकी वैयक्तिकता को कुचलने के लिए मातृत्व का उदात्तीकरण (Glorification) किया है। 'माता कुमाता नहीं हो सकती' जैसी उक्तियों के माध्यम से माँ पर निरंतर त्याग, आत्म-उत्सर्ग और मौन सहनशीलता का ऐसा भार लाद दिया जाता है जिससे मुक्त होना किसी भी स्त्री के लिए असंभव हो जाता है।

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page – 81–83

शकुन इस पारंपरिक दबाव को भीतर तक महसूस करती है। वह बंटी की माँ है, और बंटी उसके जीवन की रीढ़ है। तलाक के बाद बंटी को अपने पास रखकर वह समाज को यह दिखाना चाहती है कि वह एक 'योग्य माँ' है। वह बंटी की परवरिश में कोई कमी नहीं छोड़ती। लेकिन समाज का दृष्टिकोण क्रूर है। समाज की नजरों में एक अकेली औरत (Single Mother) कभी भी पूर्ण संरक्षण नहीं दे सकती। शकुन को पल-पल यह अहसास कराया जाता है कि एक पिता के बिना बंटी का विकास अधूरा है। मातृत्व का यह सामाजिक दबाव शकुन को लगातार एक अंतहीन अपराध-बोध (Guilt Complex) की ओर धकेलता है। वह बंटी की हर भौतिक आकांक्षा को पूरा करके अपने इस 'अपराध बोध' का शमन करना चाहती है।

शकुन का स्त्रीत्व: एक स्वतंत्र अस्मिता की मांग-'स्त्रीत्व' केवल जैविक पहचान नहीं है; यह एक मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक अस्मिता है। शकुन का स्त्रीत्व उसकी शिक्षा, उसके पद (प्रिंसिपल) और उसकी वैचारिक स्वतंत्रता में अभिव्यक्त होता है। वह अजय से अलग होकर यह साबित कर देती है कि वह अपने आत्मसम्मान की कीमत पर कोई समझौता नहीं करेगी।परंतु, आर्थिक स्वतंत्रता मिलने के बाद भी क्या एक स्त्री का अकेलापन दूर हो जाता है? शकुन केवल एक कामकाजी मशीन नहीं है; वह एक जीती-जागती औरत है। उसे एक बौद्धिक साथी की आवश्यकता है, उसे शारीरिक और भावनात्मक सुरक्षा चाहिए। डॉ. जोशी के रूप में जब उसे एक समझदार और संवेदनशील साथी मिलता है, तो उसका 'स्त्रीत्व' अंगड़ाई लेता है। वह पुनः दांपत्य के सुख, प्रेम और सामाजिक स्वीकार्यता की कामना करती है। डॉ. जोशी से विवाह करने का उसका निर्णय उसकी इसी जीवंत मानवीय इच्छा का प्रमाण है। शकुन का यह कदम पितृसत्तात्मक समाज के उस नियम को चुनौती देता है जो यह मानता है कि एक परित्यक्ता या विधवा माँ को आजीवन ब्रह्मचर्य और केवल बच्चों के प्रति समर्पण की वेदी पर अपनी बलि चढ़ा देनी चाहिए। शकुन यहाँ अपने अधिकारों के प्रति सचेत 'नवीन नारी' के रूप में उभरती है।

स्त्रीत्व बनाम मातृत्व: अंतहीन द्वंद्व के विविध आयाम-उपन्यास का मूल कथ्य शकुन के इसी दोराहे पर खड़े होने की विवशता है। जैसे ही शकुन डॉ. जोशी की ओर कदम बढ़ाती है, उसका बंटी (उसका मातृत्व) उससे दूर छिटकने लगता है। यहाँ 'स्त्री' और 'माँ' एक-दूसरे की पूरक होने के बजाय एक-दूसरे की घोर शत्रु बन जाती हैं।

क) बंटी का बाल-मन और अधिकार-भावना-बंटी अपनी माँ को पूरी तरह से केवल 'अपनी माँ' के रूप में देखना चाहता है। उसके बाल-सुलभ संसार में कोई दूसरा पुरुष उसकी माँ के साथ खड़ा हो, यह उसे स्वीकार्य नहीं है। बंटी का यह सोचना स्वाभाविक है: "मम्मी मेरी है, सिर्फ़ मेरी। फिर वह अंकल (जोशी) के पास क्यों बैठती हैं? उनके बच्चों से इतना प्यार क्यों करती हैं?" जब शकुन जोशी जी से शादी कर लेती है, तो बंटी को लगता है कि उसकी माँ का अपहरण हो गया है। वह शकुन के 'स्त्री' रूप को स्वीकार करने में असमर्थ है। उसके लिए माँ की गोद ही उसकी एकमात्र शरणस्थली थी, जो अब डॉ. जोशी और उनके बच्चों (अमी और प्रमी) के आने से विभाजित हो चुकी है।

ख) दांपत्य और मातृत्व का तनाव-डॉ. जोशी के घर आने के बाद शकुन का घर एक नए प्रकार के तनाव का केंद्र बन जाता है। शकुन अब केवल 'बंटी की माँ' नहीं है, उसे जोशी जी की पत्नी की भूमिका भी निभानी है और जोशी जी के बच्चों की माँ की भूमिका भी। जब भी वह जोशी जी के बच्चों को दुलारती है, बंटी भीतर ही भीतर ईर्ष्या की आग में जलता है। वहीं दूसरी ओर, जब वह बंटी के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती है, तो जोशी जी और बंटी के बीच एक अदृश्य पर्दा तन जाता है। वह एक नए त्रिकोण में फंस जाती है: यदि वह आदर्श पत्नी बनती है, तो उसका मातृत्व कटघरे में खड़ा होता है। यदि वह केवल बंटी की माँ बनी रहती है, तो उसका नया दांपत्य जीवन (उसका स्त्रीत्व) बिखरने लगता है।

ग) शकुन का मानसिक बिखराव-मन्नू भंडारी ने शकुन के इस मानसिक द्वंद्व को बहुत बारीक मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रित किया है। शकुन रातों को सो नहीं पाती। वह बंटी की उदासी देखती है तो उसे लगता है कि उसने डॉ. जोशी से शादी करके बंटी के साथ अन्याय किया है। लेकिन जब वह जोशी जी के व्यवहार और अपनी वैयक्तिक शांति को देखती है, तो उसे लगता है कि उसका यह निर्णय सही था। वह अपने ही भीतर दो टुकड़ों में बंट चुकी है—एक टुकड़ा 'स्त्री' का है और दूसरा 'माँ' का।

हॉस्टल का निर्णय: मातृत्व की पराजय या स्त्रीत्व की विवशता?-उपन्यास का अंतिम भाग सबसे अधिक कारुणिक और विचारोत्तेजक है। जब जोशी जी के घर में बंटी का सामंजस्य पूरी तरह विफल हो जाता है, बंटी दिन-प्रतिदिन अंतर्मुखी और आक्रामक होने लगता है, तब बंटी को हॉस्टल (बोर्डिंग स्कूल) भेजने का निर्णय लिया जाता है। यह निर्णय शकुन के लिए कोई आसान निर्णय नहीं था। यह उसके हृदय पर पत्थर रखने जैसा था। इस निर्णय को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है:

मातृत्व की पराजय: बंटी को हॉस्टल भेजना शकुन के मातृत्व की चरम पराजय है। एक माँ अपने बच्चे को अपने पास रखकर उसे वह स्वस्थ वातावरण नहीं दे पाई जिसकी उसे जरूरत थी। बंटी का हॉस्टल जाना उसके अपने घर से निर्वासन है। बंटी को लगता है कि उसे 'फेंक' दिया गया है ताकि उसकी माँ और जोशी जी चैन से रह सकें।

स्त्रीत्व की विवशता: शकुन का यह कदम उसके अपने अस्तित्व को बचाने की अंतिम और विकट कोशिश है। यदि वह बंटी को हॉस्टल नहीं भेजती, तो जोशी जी का घर पूरी तरह बिखर जाता। उसका दूसरा विवाह भी पहले विवाह की तरह असफल हो जाता। अपने नवे-अर्जित दांपत्य सुख और सामाजिक प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए उसे अपने मातृत्व की बलि चढ़ानी पड़ी। जब बंटी ट्रेन से हॉस्टल के लिए रवाना होता है, तो वह केवल एक बालक नहीं जा रहा होता, बल्कि शकुन का वह मातृत्व भी विदा हो रहा होता है जो कभी उसके जीवन की संपूर्णता था। बंटी का वह पत्र जिसमें वह लिखता है—"आपका बंटी"—शकुन के ऊपर एक ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रहार है जो उसे ताउम्र सालता रहेगा।

मन्नू भंडारी की नारीवादी दृष्टि और यथार्थवादी दृष्टिकोण-मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास में किसी भी पात्र को आदर्श रूप में प्रस्तुत नहीं किया। शकुन कोई 'खलनायिका' (Vamp) नहीं है जिसने अपनी खुशियों के लिए बेटे को कुर्बान कर दिया; और न ही वह कोई ऐसी 'कमजोर' स्त्री है जो परिस्थितियों के आगे घुटने टेक दे। वह आज की हाड़-मांस की स्त्री है। मन्नू भंडारी यहाँ अत्यंत सूक्ष्मता से यह संकेत देती हैं कि हमारी सामाजिक संरचना ही ऐसी है जहाँ स्त्री के लिए 'स्वयं' होना और 'माँ' होना दोनों एक साथ संभव नहीं हो पाते। पुरुष (अजय) तलाक के बाद तुरंत दूसरी शादी कर लेता है, अपनी नई पत्नी (मीरा) के साथ खुश रहती है, और समाज उसके 'पितृत्व' पर कोई सवाल नहीं उठाता। लेकिन शकुन जब ऐसा करती है, तो पूरा समाज, यहाँ तक कि उसका अपना बेटा भी उसे अपराधी के कटघरे में खड़ा कर देता है। यह उपन्यास पितृसत्तात्मक दोहरे मापदंडों पर एक करारी चोट है। यह स्पष्ट करता है कि समाज पुरुष को तो वैयक्तिक स्वतंत्रता देता है, परंतु स्त्री को

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page – 81–83

'माँ' के खोल से बाहर निकलने की अनुमति नहीं देता।

आधुनिक संदर्भों में प्रासंगिकता :-आज १९७१ (जब यह उपन्यास प्रकाशित हुआ था) से हम बहुत आगे आ चुके हैं, लेकिन क्या शकुन का द्वंद्व आज समाप्त हो गया है? आज भी कामकाजी और आत्मनिर्भर महिलाओं की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। तलाक की दरें बढ़ी हैं और एकल माताओं (Single Mothers) की संख्या भी। आज भी जब एक आधुनिक माँ अपने करियर, अपनी व्यक्तिगत खुशियों, या पुनर्विवाह के बारे में सोचती है, तो समाज उसे 'स्वार्थी' घोषित करने में देर नहीं लगाता। बच्चों के मन में भी अपनी माँ के प्रति एक रूढ़िवादी छवि होती है। इसलिए, कड़प्पा के इस महत्वपूर्ण मंच से श्रीमती पी.एम.आर. जयंती जी द्वारा उठाया गया यह शोध-विषय केवल एक साहित्यिक विमर्श नहीं है, बल्कि यह आज के समाज का एक अत्यंत ज्वलंत यथार्थ है। यह उपन्यास हमें यह सोचने पर विवश करता है कि क्या हम एक ऐसा समाज बना पाए हैं जहाँ एक स्त्री बिना अपने मातृत्व को खोए अपने 'स्त्रीत्व' का आनंद ले सके?

निष्कर्ष :- संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'आपका बंटी' उपन्यास में मन्नू भंडारी ने स्त्रीत्व और मातृत्व के जिस संघर्ष को दिखाया है, वह त्रिकोणीय और बहुआयामी है। शकुन के माध्यम से लेखिका ने पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के टकराव को जीवंत कर दिया है। शकुन का चरित्र इस बात का गवाह है कि आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक प्रतिष्ठा मिलने के बाद भी एक स्त्री आंतरिक रूप से कितनी अकेली और विवश हो सकती है। मातृत्व जहाँ उसका नैसर्गिक गुण और आत्मिक आनंद है, वहीं पितृसत्तात्मक व्यवस्था में वह उसके लिए एक बंधन और पिंजरा बन जाता है। बंटी का हॉस्टल जाना शकुन के मातृत्व की वह पराजय है, जो उसके स्त्रीत्व की जीत की कीमत के रूप में वसूली गई है। यह उपन्यास किसी आसान समाधान की ओर इशारा नहीं करता, बल्कि समाज के सामने एक विकट प्रश्न छोड़ जाता है, जिसका उत्तर आज भी अर्ध-सदी बीत जाने के बाद भी अनुत्तरित है। पी.एम.आर. जयंती जी का यह शोध कार्य इस अनसुलझे द्वंद्व को एक नई दृष्टि प्रदान करता है और समकालीन स्त्री-विमर्श की दिशा में एक अत्यंत मूल्यवान योगदान है।

******

संदर्भ सूची :-

१. भंडारी, मन्नू. (१९७१). आपका बंटी. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
२. सिंघल, डॉ. धर्मपाल. (१९९५). मन्नू भंडारी के उपन्यासों में नारी चेतना. दिल्ली: संक्रांति प्रकाशन.
३. शर्मा, रामविलास. (१९८२). नई कविता और अस्तित्ववाद. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
४. सिंह, बच्चन. (२००२). आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन.
५. कुमार, डॉ. सुधीर. (२०१०). समकालीन हिंदी उपन्यास और नारी विमर्श. कानपुर: विकास प्रकाशन.
६. भंडारी, मन्नू. (२००३). एक कहानी यह भी (आत्मकथा). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.
७. प्रसाद, वासुदेव. (२०१४). मन्नू भंडारी का कथा-संसार. पटना: भारती भवन.
८. ठाकुर, कल्पना. (२०१८). हिंदी कथा-साहित्य में बाल-मनोविज्ञान और नारी अस्मिता. दिल्ली: वाणी प्रकाशन.